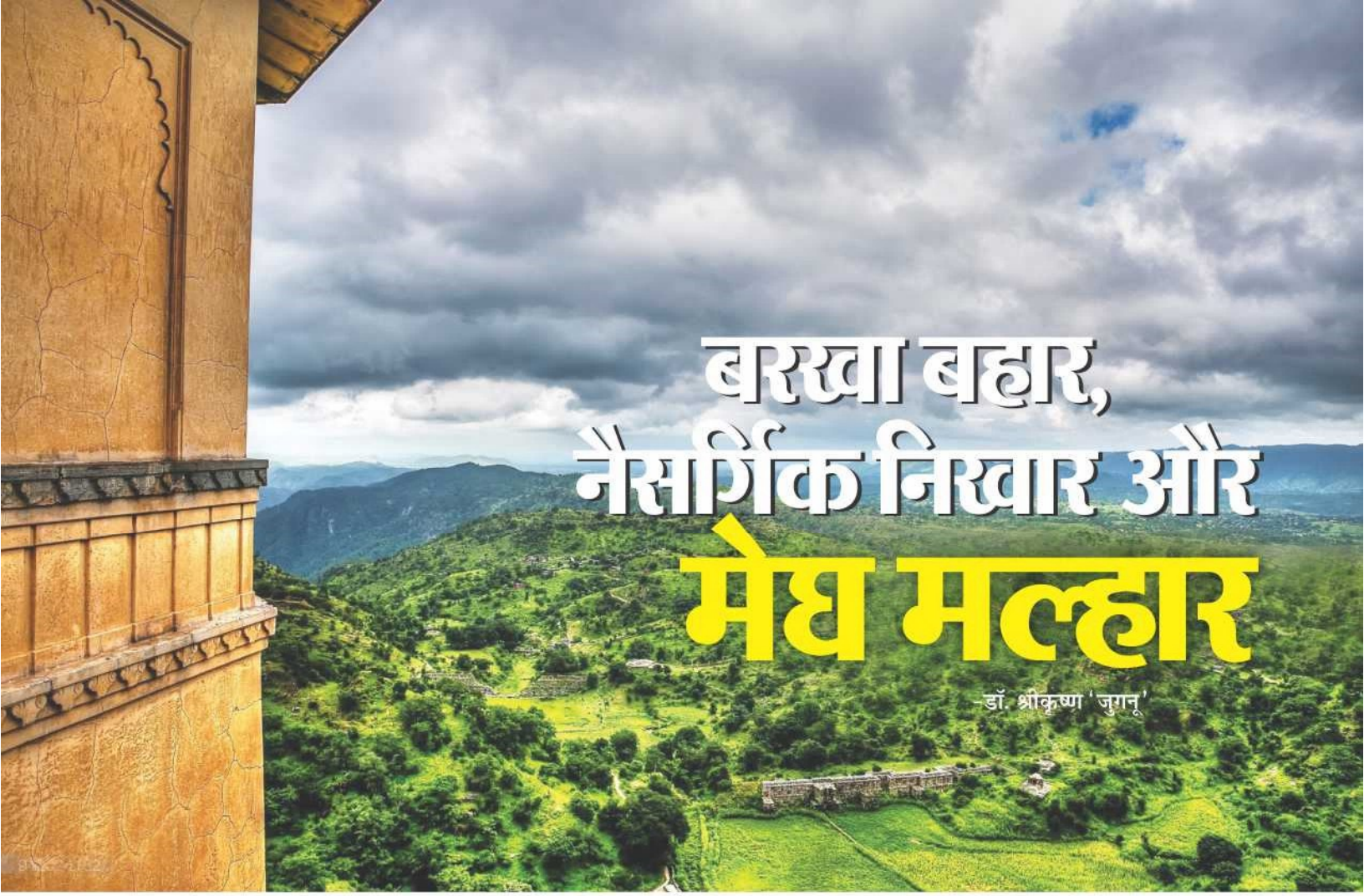

बरखा बहार, नैसर्गिक निखार और मेघ मल्हार

-डॉ. श्रीकृष्ण 'जुगनू'

प्रकृति के क्रोड में नेत्रोन्मीलन करने वाला मानव समयानुसार प्रकृति के विविधोन्मुख रूपों से भी प्रभावित होता रहा है। पलकें खोलते ही मानव को प्रकृति का अमिट साहचर्य प्राप्त होता है। प्रकृति प्रदत्त पदर्थों से ही उसका भरण पोषण हुआ। कहीं प्रकृति के मातृत्व रूप ने मानव की मंगल-कामना करते हुए अपना वात्सल्य उड़ेला तो कहीं सहचरी और संगिनी बन कर उसे हर्षित भी किया है।

चिरकाल से लेकर वर्तमान समय तक प्रकृति और मानव के मध्य अटूट सम्बन्ध रहा है। मनुष्येत्तर जगत जिसमें नदी, वन, पर्वत, ज्योत्सना, प्रातः एवं संध्याकालीन गगन की रंग बिरंगी छटा, मृगों का कलरव, वर्षा के एकत्र जल की मधुर कलकल ही तो वह प्राकृतिक छटा है जो चर-अचर सम्पति को आकर्षित करती है।

मानव और प्रकृति के इस रागात्मक सम्बन्ध की ध्वनि ही तो सशक्त रूप से गीतों में अभिव्यंजित हुई है। लोकगीतों की अपनी फेहरिस्त है। 'लगान' फिल्म का उक्त गीत इसी प्रकृति और मानव सम्बन्धों की अभिव्यंजना है।

काले मेघा काले मेघा पानी तो बरसाओ,
बिजरी की तलवार नहीं
बूंदों के बान चलाओ,
घनन घनन घिर आये बदरा....

वैशाख और जेठ की भीषण गर्मी से राहत दिलाने वाले आषाढ़, सावन ओर भादो माह मुख्य रूप से वर्षा ऋतु के लिए जाने जाते हैं। वर्षा ऋतु सभी ऋतुओं में श्रेष्ठ मानी जाती है क्योंकि वर्षा का जल मानव के लिए अत्यंत उपयोगी है और वैसे भी पानी के बिना तो जीवन ही सम्भव नहीं है। भारत एक कृषि प्रधान देश है। कृषि की सफलता और विफलता वर्षा पर ही निर्भर करती है। वर्षा से फसलों को पानी मिलता है। सूखे हुए कुओं, तालाबों तथा नदियों को फिर से भरने का कार्य बारिश के द्वारा ही किया जाता है।

ग्रीष्म की तपन से मुक्ति पाने के साथ साथ वर्षा का आगमन अपने साथ सुखद अनुभूति लेकर आता है। मृषण मरूभूमि हरियाली से लहलहा उठती है। नदी -नाले सब पानी से भर जाते हैं। कहीं मेंढ़क की टर्र-टर्र की आवाज तो कहीं झिंगुर की गुनगुनाहट सुनाई देती है। आकाश में काले काले बादलों को देखकर मयूर नृत्य करने लगते हैं। ढोला मारू रा दुहा में पावस ऋतु में मोर,